# प्रथम अध्याय

# हबीब तनवीर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

## 1.1 व्यक्तित्व

हबीब तनवीर का जन्म 1 सितम्बर, 1923 को छत्तीसगढ़ में रायपुर जिले के बैजनाथ पारा नामक गाँव में हुआ था। उनका मूल नाम हबीब अहमद खाँ था। लेकिन परिवार में सभी लोग प्यार से उन्हें 'बाबा' कह कर बुलाते थे। बाद में उन्होंने 'तनवीर' उपनाम शायरी लिखने के लिए चुना और तभी से हबीब तनवीर के नाम से लोग जानने लगे। हबीब का परिवार मूल रूप से पेशावर का रहने वाला था जो बाद में भारत (रायपुर) आकर बस गया। हबीब तनवीर की माँ नज़ीरून्निसा बेगम रायपुर की ही रहने वाली थी। वे लिखते हैं, *"My Father was from Peshawar. When he was young, God knows how, along with his Father, my grandfather, he found his way to the Central Provinces (CP), and in CP too to Raipur where my mother's family lived, the same Raipur that used to be in CP, then in Madhya Pradesh and is currently the capital of Chhattisgarh. He settled there and never returned to his native land."*[1]

हबीब तनवीर का एक बड़ा परिवार था। उनके दादा का नाम हबीबुल्लाह खान था तथा पिता हाफिज मुहम्मद हयात खाँ धार्मिक प्रवृति के इंसान थे। जिस कारण घर में उनका अनुशासन चलता था। हबीब के अतिरिक्त परिवार में चार बहन और दो भाई थे, यानी कुल सात भाई बहन थे। हबीब लिखते हैं, *"We would have been eleven siblings but only sevenhad survived- four sister and three brother; the other four children died as infants."*[2]

---

[1] Farooqui, Mahmood (tra.); Habib Tanvir Memoirs; penguin group, new delhi; 2014; p. 3

[2] Ibid; p. 8

हबीब तनवीर का बचपन रायपुर में बीता था जिस कारण पास के ही लॉरी म्युनिसिपल हाई स्कूल (वर्तमान में इस स्कूल का नाम 'माधव राव सप्रे शासकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय' हो गया है) से उनकी प्रारंभिक शिक्षा हुई। बी.ए. नागपुर के मॉरिस कॉलेज (वर्तमान में इसका नाम 'वसंतराव नाईक शासकीय कला व समाज विज्ञान संस्था' हो गया है) से हुए तथा एम. ए. की पढ़ाई हेतु अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय चले गए।

देखा जाए तो हबीब तनवीर की बचपन से ही अभिनय और कला में रूचि थी। लेकिन परिवार के अंदर उनको कला के सम्बन्ध में अंतरविरोध एक साथ देखने को मिला। क्योंकि उनके पिता का मिजाज कुछ अलग ही था, जिसमें कला या अभिनय के लिए कोई खास जगह नहीं थी। वह पांच वक्त के नमाज़ी थे और कुरान को ही सब कुछ मानते थे। दूसरी तरफ उनके मामा कला और संगीत से जुड़े हुए थे। यही नहीं हबीब तनवीर के बड़े भाई ज़हीर अहमद खाँ भी उन दिनों पारसी नाटकों में अभिनय करते थे और कभी-कभी उनको चुपके से इन नाटकों को देखने ले जाते। वह लिखते हैं, *"Bhaijaan used to take part in the plays put up at the Kali Bari. He took me to see a play there while I was still very young."*[3]

बड़े भाई की रंगमंचीय गतिविधियों को तो पिता ने कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। लेकिन बाद में जब हबीब स्वयं अपने स्कूल की गतिविधियों में भाग लेने के लिए अभिनय करने लगे तो पिता ने कोई खास आपत्ति नहीं की। बचपन में किये गए उन नाटकों की स्मृतियों का उल्लेख हबीब तनवीर इस प्रकार करते हैं-

*"किसी नाट्य प्रदर्शन में भाग लेने का मेरा पहला अनुभव उस वक्त का है जब मैं ग्यारह या बारह वर्ष का था। मैंने शेक्सपियर के किंग्जान का एक अंश किया था। मैंने प्रिंस आर्थर का अभिनय किया था... फिर मैंने अपने फारसी शिक्षक मोहम्मद ईशाक, जो बाद में मेरे बहनोई हुए,*

[3] Farooqui, Mahmood (tra.); Habib Tanvir Memoirs; penguin group, New Delhi; 2014; P. 27

*द्वारा लिखे हुए एक बड़े नाटक में भी अभिनय किया।''*[4] इन दोनों नाटकों में अभिनय के लिए उन्हें पुरस्कार भी मिला। उसके बाद तो कॉलेज के समय जब कभी उनको मौका मिलता अभिनय करते और कभी-कभी मुशायरों में भी जाते।

बालक हबीब तनवीर की दूसरी बड़ी दिलचस्पी फिल्मों में थी। क्योंकि उस समय नाटक तो साल में एक दो बार किसी खास मौक़े पर ही होते थे। मूक फिल्मों के दौर से ही वह फिल्में देखने जाते थे। हबीब लिखते हैं *''मैं अपने बचपन से ही जबर्दस्त फिल्म देखने वाला रहा हूँ। रायपुर में मैंने मूक फ़िल्में देखीं। टिनटिन और उस समय की सीरिज की तमाम फ़िल्में। दीगर मूक फ़िल्में। तम्बू में भी, चलते–फिरते सिनेमा के जरिए भी और बाबूलाल टॉकीज में भी, जो उस वक्त रायपुर में एकमात्र सिनेमाघर था....हम लोग उसमें बिना टिकिट जाया करते थे। कोई शरारती लड़का टेंट (तम्बू) को एक तरफ कहीं से काट देता और उस दरार से हम लोग भीतर चले जाते थे। कभी–कभी हम लोग रस्सों के नीचे से झुक कर भीतर सरक जाते। ठीक उसी तरह जैसे हम लोग सर्कस में घुसा करते थे।''*[5]

अपने नागपुर प्रवास के दौरान भी हबीब तनवीर अक्सर फिल्में देखते। इन फिल्मों के कथानकों, अभिनय और तकनीक पक्ष ने उनके मन को इतना प्रभावित कर दिया कि वे एम. ए. के दौरान ही बम्बई चले आये। देखा जाए तो बम्बई की यह जिन्दगी उनके संघर्ष की शुरुआत थी। यहां वे किसी को नहीं जानते थे और शुरुआत के दो चार रोज फुटपाथ पर सोकर गुजारे। फिर एक दिन अचानक उनको जुल्फिकार अली बुखारी (वह उन दिनों रेडियो में प्रोड्यूसर थे) मिले और उनकी मदद से हबीब तनवीर को हथियारों के एक कारखाने में सुपरवाइज़र की नौकरी मिल गई। इस तरह बम्बई में पैर जमाने के लिए यह उनकी पहली मंजिल थी। उसके बाद तो हबीब तनवीर

---

[4] तनवीर, हबीब; 'ए लाइफ इन थियेटर'; प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 7-8

[5] भार्गव, भारतरत्न; रंग हबीब; राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली; संस्करण 2006; पृ. 24

1944-1945 में आकाशवाणी, बम्बई के तत्कालीन निदेशक रहे और उन्होंने फिल्मों का रिव्यू करना भी शुरू कर दिया। बम्बई रेडियो स्टेशन से हबीब तनवीर की जो फिल्म समीक्षाएं प्रसारित होती थी, वो इतनी सटीक, तीखी और बेबाक होती थीं कि वे मशहूर और विवादास्पद, दोनों बन गए। उनके साहस और प्रतिभा को देखते हुए 'फिल्म इंडिया' पत्रिका के संपादक बाबू राव पटेल ने इन्हें अपने सीनियर एसिस्टेंट के एडिटर के रूप में बुला लिया।

'फिल्म इंडिया' छोड़ने के बाद हबीब तनवीर फ़िल्मी पत्रकारिता से एक लम्बे अरसे तक जुड़े रहे तथा अनेक पत्र, पत्रिकाओं में नियमित रूप से लिखते रहे। अपने इस प्रवास के दौरान (1946-53 तक) उन्होंने कई फिल्मों ('राही', 'दिया जले सारी रात', 'आकाश', 'लोकमान्य तिलक', 'फुटपाथ', 'नाज', 'बीते दिन') में अभिनय किया, गीत, संवाद लिखें। लेकिन फ़िल्मी दुनिया की यह माया नगरी हबीब तनवीर को ज्यादा समय तक बांध नहीं सकी और वह 1954 में दिल्ली आ गये। बाद के दिनों में 'गांधी', 'प्रहार', मंगल पाण्डेय (बहादुरशाह जफ़र की भूमिका) जैसी फिल्मों में भी बेहतर अभिनय किया।

हबीब तनवीर को अभिनय से जितना प्रेम था उतना ही शायरी से भी था। अपने कॉलेज के दिनों से ही वह मुशायरों में जाने लगे थे। बाद में तो एक शायर की हैसियत से 'प्रगतिशील लेखक संघ' से जुड़े। *''सज्जाद जहीर के घर हर रविवार को प्रगतिशील लेखकों की बैठकें होती थीं, जहाँ ये लेखक अपनी नई कहानियां, नज्में, गजलें आदि पढ़ते और उन पर चर्चा करते...उन दिनों अली सरदार जाफरी 'नया अदब' नाम की एक साहित्यिक पत्रिका का संपादन करते थे और उस पत्रिका में उनकी छह गजलों का पहला सैट प्रकाशित हुआ था, जिसकी अच्छी–खासी चर्चा भी हुई।''*[6] बम्बई के अलावा गुजरात, उतर-प्रदेश और मध्य–प्रदेश के अखिल भारतीय मुशायरों में शिरकत करने के लिए उन्हें आमंत्रित किया जाने लगा था। कहने का तात्पर्य यह कि अदब की

[6] भार्गव, भारतरत्न; रंग हबीब; राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली; संस्करण 2006; पृ. 32

दुनिया में उन्होंने अपनी एक जगह बना ली थी और यही वह परिवेश था जब हबीब तनवीर 'इप्टा' (भारतीय-जन-नाट्य-संघ) की बम्बई शाखा के सम्पर्क में आये।

उस समय नाटक के क्षेत्र में इप्टा की स्वतंत्र पहचान थी और ख्वाजा अहमद अब्बास, पं. रविशंकर, विमल राय, बलराज साहनी, भीष्म साहनी, बलवंत गार्गी, दीना पाठक, मोहन सहगल, उत्पल दत्त, नेमिचंद्र जैन, शान्ता गाँधी, शबाना आजमी आदि चर्चित लोग इससे जुड़े हुए थे। हबीब तनवीर भी जब इससे जुड़े तो तहेदिल से उसके होकर रह गए। इप्टा से जुड़ने के संबंध में हबीब कहते हैं कि *''हम लोग तमाशा, लावणी, भवाई जैसी लोकविधाओं और गुजरात के लोकगीतों से परिचित हुए। इप्टा के कोंकणी दल में एक बड़ा मोहक संगीत दल था। मुझे संगीत से गहरा प्रेम है और इसीलिए यह सब वास्तव में देखने लायक था। मेरी साहित्यिक रूचि ही मुझको इस तरफ ले आई और फिर आख़िरकार बोलियों की तरफ। क्योंकि मैं उनको सभी महान साहित्यों का मूल मानता था।''*[7]

इस तरह देश के विभिन्न अंचलों के गीत, संगीत और नृत्य ने उन्हें काफी प्रभावित किया। साथ ही बलराज साहनी और दीना पाठक जैसे लोगों ने उनके रंगमंचीय अनुभवों को समृद्ध किया।

इप्टा के समय के अपने कई अनुभवों को हबीब तनवीर ने साझा किया है। उन्होंने 'इप्टा' में अपना पहला नाटक बलराज साहनी के निर्देशन में किया था। इस नाटक का कथानक कश्मीर की आजादी से जुड़ा हुआ था- डोगरा आन्दोलन से सम्बंधित। उसमें हीरो था एक आजादी-पसंद शायर, हबीब ने वह रोल किया। उसके बाद साहनी के ही निर्देशन में 'दकन की एक रात' में अभिनय किया, जिसका सम्बन्ध तेलंगाना के आन्दोलन से था। हबीब तनवीर इसमें एक अस्सी–

---

[7] भार्गव, भारतरत्न; रंग हबीब; राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली; संस्करण 2006; पृ. 32

नब्बे वर्ष के बूढ़े की भूमिका में थे।[8] बाद में इलाहाबाद में वे 'दकन की एक रात' के साथ ही 'जादू की कुर्सी' नामक नाटक भी ले कर गए थे। मोहन सहगल ने इसका निर्देशन किया था। यह नाटक बाम्बे के उन मध्यवर्गीय लोगों पर केन्द्रित था जिन्हें अपने घर से रोज काफी दूर ऑफिस जाना पड़ता है। इस नाटक के सम्बन्ध में वे लिखते हैं-

*"वह बेहद हंसाने वाली कामेडी थी सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों पर एक चुभता, मारक व्यंग्य। बलराज ने नायक का रोल किया था और उसके बाद फिर कभी मैंने बलराज को हास्य की भूमिका में नहीं देखा। कम से कम किसी फिल्म में तो नहीं... हम सबको अपनी अपनी भूमिका को इम्प्रोवाइज करने की स्वतंत्रता दी गई थी। मैं न्यायाधीश बना था और मैंने भूमिका में हकलाकर बोलना तय किया। वह एक सम्पूर्ण नाटक था।... दुर्भाग्य से उस कमाल के नाटक का आज भी कोई लिखित पाठ नहीं है।"*[9]

उन दिनों हबीब तनवीर इप्टा में रह कर बहुत कुछ सीख रहे थे। अपनी रंगमंचीय गतिविधियों के कारण जब इप्टा के सभी प्रमुख नेताओं, जैसे दीना पाठक, सरदार जाफरी, बलराज आदि को पकड़ कर दो साल के लिए जेल में डाल दिया था, तब संस्था के कार्यभार के लिए जेल के भीतर से ही पार्टी ने हबीब तनवीर को चुना। इस तरह वे इप्टा के सचिव, नाटककार बन गए। इप्टा के लिए उन्होंने 'शांतिदूत कामगार' (1948) नामक नाटक तैयार किया और गली चौराहों पर जा कर इसे खेला। इसमें जोहरा सहगल ने भी काम किया। इसी वर्ष प्रेमचंद की कहानी पर आधारित 'शतरंज के मोहरे' भी उनके द्वारा लिखा गया, जिसे सबसे पहले दीना पाठक ने और बाद में खुद हबीब तनवीर ने सफलतापूर्वक निर्देशित किया था। हबीब तनवीर पूरी निष्ठा के साथ 'इप्टा' के लिए काम करते रहे।

---

[8] अग्रवाल, प्रतिभा (सं); हबीब तनवीर एक रंग-व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कलकत्ता; संस्करण 1993; पृ. 11

[9] तनवीर, हबीब; 'ए लाइफ इन थियेटर'; प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक-103, 2003; पृ. 15-16

लेकिन इतनी जबर्दस्त कामयाबी मिलने के बावजूद भी देश का इतना बड़ा यह रंग-आन्दोलन धीरे-धीरे बिखर गया। इप्टा के बिखराव के बाद भी हबीब तनवीर ने अपना कार्य क्षेत्र नहीं बदला। वे निरंतर रंगकर्म से जुड़े रहे। जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट्स जैसी अनेक संस्थाओं और दूसरे समूहों के लिए नाटकों का निर्देशन करते रहे। फिर बाद में बम्बई की इस चकाचौंध, माया, आकर्षण और सुविधाओं की दुनिया को एक झटके में तोड़कर वे 1954 में दिल्ली आ गए। इस संदर्भ में वे लिखते हैं *"जो भी हो, सही या गलत, मैं इस बात पर मुतमईन था कि मेरे पास कहने के लिए कुछ था। जैसा भी हो और मुझे जो कुछ कहना था, सौन्दर्यशास्त्र में, प्रदर्शनकारी कलाओं में और साथ ही सामाजिक रूप से, राजनैतिक नजरिये से उसका माध्यम सिनेमा नहीं था, वह थियेटर था। यह एक बहुत साफ बोध था मन में, पांचवें दशक के प्रारम्भिक दिनों में, जो मुझे दिल्ली ले आया।"*[10]

दिल्ली का यह नया परिवेश भी उनके लिए संघर्षो का रहा, क्योंकि जिस भाव बोध, विचार को लेकर वे यहां आए थे उसमें अन्तर्निहित विरोध और प्रतिरोध के तत्व भी बहुत साफ थे। यहां आने के बाद हबीब ने सबसे पहले एलिजाबेथ गाबा के स्कूल में काम किया। यहाँ बच्चों के साथ रहते-रहते वे उनके मनोविज्ञान को समझने लगे थे और इसी मनोविज्ञान के आधार पर उन्होंने बच्चों के लिए नाटक लिखें। वर्ष 1954 मेंउन्होंने 'गधे', 'परम्परा', 'हर मौसम का खेल', 'चांदी का चमचा', 'दूध का गिलास', 'कारतूस', और 'बच्चों की दुनिया' जैसे बाल नाटकों का लेखन और निर्देशन किया। फिर काफी समय बाद उन्होंने 'किस्सा ठेलाराम' (1998) नाम से आखिरी नाटक बच्चों के लिए लिखा।

देखा जाए तो इप्टा से हबीब तनवीर को भारतीय लोकनाट्य रूपों की शक्ति और ऊर्जा से

[10] कुशवाहा, डॉ. रामाशंकर; 'हबीब तनवीर का रंग लोक'; डॉ. शिवेन्द्र कुमार मौर्य (सं.); उन्मेष; अंक 6, मई-अक्तूबर, 2020, पृ. 214

परिचित होने का एक अच्छा अवसर मिला था। लेकिन तत्कालीन पाश्चात्य रंगमंच के प्रचलित और स्वीकृत मुहावरे के स्थान पर वे जिस नये मुहावरे को स्थापित करना चाहते थे, उसका कोई निश्चित स्वरूप तब उनके सामने नहीं था। समकालीन नाटक और रंगमंच के लिए उसके कलात्मक प्रयोग की राह तलाश की जानी अभी बाकी थी और यह राह उन्हें 'आगरा बाज़ार' की प्रस्तुति से मिली। इसकी प्रस्तुति के द्वारा वे समझ पाते हैं कि 'स्थापित रंगमंचीय रूढ़ियों को तोड़ कर यदि जनता तक अपनी बात पहुंचानी है तो मंच पर एक ऐसा उन्मुक्त और सहज वातावरण तैयार किया जाना चाहिए जो संगीत और कविता के श्रेष्ठ गुणों को आत्मसात करके नाटक की सम्प्रेषण क्षमता में वृद्धि करने वाला हो।' नाटक के बाद उनकी मुलाकात बेगम कुदसिया जैदी से हुई जिसने हबीब तनवीर के साथ मिलकर 'हिन्दुस्तानी थियेटर' की स्थापना की और देश के अनेक नगरों में 'आगरा बाज़ार' के अत्यंत सफल प्रदर्शन करवाये।

इस नाटक के तुरंत बाद लंदन जाकर नाट्य प्रशिक्षण प्राप्त करने का हबीब को एक और सुनहरा अवसर मिला। वे 1955 में 'राडा' (रॉयल एकेडेमी ऑफ ड्रेमेटिक आर्ट्स) लंदन, में सीखने के उद्देश्य से अपने देश की मिट्टी से दूर चले गए। फिर वहीं के ब्रिस्टिल ओल्ड विक तथा ब्रिटिश ड्रामा लीग में भी प्रशिक्षण प्राप्त किया। फिर कुछ दिनों तक वे यूरोपीय देशों की यात्रा करते रहे, जिसमें विशेष रूप से बर्लिन एन्साम्बिल (पश्चिम जर्मनी) की प्रस्तुतियों का अवलोकन और अध्ययन शामिल हैं। अपने यूरोप प्रवास के दौरान हबीब तनवीर ने यह महसूस किया कि अपनी भाषा तथा संस्कृत नाटकों का आकर्षण अलग ही है।

उन्होंने पश्चिमी दृष्टि और तौर-तरीकों को बहुत अच्छी तरह देखा, समझा। जो उपयोगी लगा उसे ग्रहण किया। लेकिन वे अब इस बात में स्पष्ट थे कि उन्हें अपने देश लौटना है, अपने लोगों के सहयोग से अपनी भाषा में ही थियेटर करना है। इसीलिए स्वदेश लौटने के बाद इन्होंने संस्कृत नाटकों का गहन अध्ययन किया और अपने रंग-मंचीय मुहावरे की खोज में लगे रहे।

उन्होंने 'हिन्दुस्तानी थियेटर' के लिए सबसे पहले शूद्रक के संस्कृत नाटक 'मृच्छकटिकम' का रूपान्तर 'मिट्टी की गाड़ी' नाम से किया,जिसमें उन्होंने कई मौलिक प्रयोग किये। इसकी पहली प्रस्तुति पर रंगकर्मियों, आलोचकों द्वारा कई कटाक्ष किये गए। लेकिन बाद के प्रदर्शनों को आलोचकों ने सराहा भी।

हबीब तनवीर के स्वदेश लौटने से पहले मोनिका मिश्रा ने 'हिन्दुस्तनी थियेटर' के लिए 'शकुन्तला' और 'खालिद की खाला' नाटकों का मंचन किया था। लेकिन उनके 'हिन्दुस्तानी थियेटर' में वापस आने के कारण मोनिका की नौकरी चली गई और इस बात के लिए मोनिका ने हबीब से मुलाकात की थी। इस बारे में हबीब बताते हैं कि "*After completing my two-year stint in Britain, at RADA and then Bristol Old Vic Theatre school, and a year roaming around Europe when I returned to India I made her lose her job. This was her grudge against me and she had first come to meetme to complain about this.*"[11] फिर 1959 में दोनों ने मिलकर कुछ लोक कलाकारों की मदद से दिल्ली के एक मोटर गैराज में 'नया थियेटर' की बुनियाद डाली और बाद में दोनों ने शादी कर ली।

देखा जाए तो 'नया थियेटर' की पहली प्रस्तुति 'सात पैसे' थी जिसके लेखक हबीब तनवीर और निर्देशिक मोनिका जी थी। फिर 1960 में नया थियेटर ने दो बड़े नाटक पेश किये। पहला आगा हश्र का 'रुस्तम शोहराब' और दूसरा 'लाला शोहरत राय' जो मौलियर के 'बुर्जुआ जेंटिलमैन' का अनुवाद था। 1961 में 'सूत्रधार 1961' का लेखन और निर्देशन किया। बाद में इसे 'सूत्रधार 77' के नाम से खेला गया। दोनों ने मिलकर नया थियेटर के संगठन का काम आगे बढ़ाया। हर कठिन परिस्थितियों में मोनिका ने हबीब को संघर्ष के लिए निरंतर प्रेरित किया।

---

[11] Farooqui, Mahmood (tra.); Habib Tanvir Memoirs; penguin group, new delhi; 2014; P. 301-302

जिसके परिणामस्वरूप सन् 1964 में 'नया थियेटर एक रजिस्टर्ड सोसाइटी' और 1972 में एक पेशेवर 'थियेटर कम्पनी' बना। इस बीच रंग मुहावरे की तलाश में कई अंग्रेजी नाटकों का निर्देशन नया थियेटर द्वारा किया जाता रहा।

1970 के दशक में आखिरकर हबीब तनवीर ने अपने रंग मुहावरे को खोज निकाला। 'कला और संस्कृति के क्षेत्र में तब देश के गिने-चुने लोग ही उनके विचारों से सहमत थे। उस समय वे अपने तीखे और विरोधी तेवरों के कारण अभिजात्य-वर्ग की आंख की किरकिरी बने हुए थे। लेकिन भारतीय रंगमंच के भविष्य के सम्बन्ध में उनके विचारों को अनदेखा किया जाना भी लगभग असम्भव सा हो गया था। अत्याचार, उत्पीड़न और शोषण की मारक स्थितियों के बावजूद भी जो लोग अपनी कला और संस्कृति को बचाए रख सकने में समर्थ थे, वही उनकी आंतरिक शक्ति बने।' अपने सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश की व्याख्या करते हुए वे जिस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, वह भी ध्यातव्य है-

*"यह बात भी हमें शुरुआती तौर पर ही अब अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि शहरी रंगमंच ने जो स्वरूप हमारे सामने स्थापित किया है, वह पश्चिमी थियेटर से माँगा हुआ है और हमारे देश की सामयिक बुनियादी समस्याओं, सांस्कृतिक बुनावट, जीवन पद्धतियों और सामाजिक अपेक्षाओं को पूरा करने में एकदम असमर्थ है। भारतीय संस्कृति के स्वरूप की सही पहचान हमें भारत के देहातों, गाँवों और कस्बों में मिलती है। यहाँ के गाँवों में ही हमें अपनी प्राचीन गौरवशाली नाट्य परम्पराओं के संदर्भ-संकेत मिलते हैं जो आज भी बरकरार हैं। यहां के नाट्य दलों को ही समुचित प्रोत्साहन दिए जाने की आवश्यकता है। दूसरी ओर, जब तक शहरी युवा वर्ग के लोग पारम्परिक नाट्य रूपों से आत्मगत तादात्म्य स्थापित नहीं करेंगे तब तक सही मायनों में भारतीय रंगमंच, जो कि अपनी जड़ों से गहरा जुड़ा हो और साथ ही आधुनिक तथा*

*विश्वजनीन हो, स्थापित नहीं हो सकता।"*[12] उनका यह कथन लोक और भारत के आधुनिक रंगमंच के प्रति उनकी दृष्टि को रेखांकित करता है।

हबीब तनवीर ने भारतीय रंग परम्परा में उपलब्ध संस्कृत नाटकों, लोक नाटकों तथा पश्चिम के नाटकों को व्यक्तिगत प्रयोगों द्वारा अपनी प्रस्तुति के लिए चुना। फिर भी वे अपनी धरती में रची-बसी पारम्परिक नाट्य-शैलियों के प्रति ही अधिक उत्साहित थे। उनका विचार था कि सत्ता के समर्थन में नहीं, बल्कि सत्ता के विरोध में ही सच्ची कला पनपती है, जिसका सीधा संबंध आम आदमी की तकलीफों, दुखों और उनकी विवशताओं से होता है। उनकी यह सामाजिक प्रतिबद्धता ही लोक शैलियों का सहारा लेकर अभिव्यक्त होती है।

सन् 1970 से तीन बरस तक हबीब तनवीर लगातार छत्तीसगढ़ी लोक तत्त्वों के आधार पर प्रयोग करते रहे। 1972 में पंडवानी गायक पूनाराम निषाद के माध्यम से पंडवानी शैली में 'अर्जुन का सारथी' का मंचन किया। फिर शिव-पार्वती प्रसंग पर आधारित कर्म-कांडी लोक-नाट्य गौरा-गौरी का मंचन किया। 1973 में हबीब तनवीर द्वारा रायपुर में एक महीने का छत्तीसगढ़ी नाचा शिविर चलाया गया जिसका नतीजा 'गाँव का नाम ससुराल, मोर नाव दामाद' नाटक था। इसमें तीन लोकनाट्यों 'छेरा-छेरी', 'बुढ़वा विवाह' और 'देवार-देवारिन' के चुनिंदा प्रसंगों को एक नाटक की शक्ल दी गई थी। इस नाटक ने उनके मुहावरे को गढ़ने में 'मील के पत्थर' का काम किया। वास्तव में 'चरनदास चोर' नाटक की सफलता का बीज ही इस नाटक में अन्तर्निहित है। 'चरनदास चोर' (1974) सबसे पहले एक एकांकी नाटक के रूप में छत्तीसगढ़ी में छत्तीसगढ़ी कलाकारों के माध्यम से अट्ठारह हजार दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया गया। दिल्ली में इस पर फिर काम किया गया और नाटक की अवधि दो घंटे की हो गई। इसी रूप में यह नाटक कमानी अडीटोरियम में मई 1975 में किया गया। बाद में तो यह सारे हिंदुस्तान में दिखया गया।

---

[12] सुलभ, हृषीकेश; रंग अरंग; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2012; पृ. 58

1982 में 'एडिनबरा अंतर्राष्ट्रीय नाट्य उत्सव' में इसे 52 नाटकों में प्रथम फ्रिन्ज अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिला।

1974 में ही हबीब तनवीर ने 'राजा चंबा और चार भाई' में लोक कलाकारों और शहरी प्रशिक्षित अभिनेताओं का समन्वय किया। 1976 में भारतीय लोकनाट्य-रूपों के गहन अध्ययन के लिए उन्होंने देश के अनेक भागों की यात्राएँ की और अनेक प्रयोगात्मक प्रदर्शन किये। 1978-79 में छत्तीसगढ़ के दुर्ग जिले में प्रचलित एक मिथक पर आधारित 'बहादुर कलारिन' तथा ब्रेख्त के नाटक 'ए गुड वूमन ऑफ सेंतज़ुआन' का छत्तीसगढ़ी रूपांतर 'शाजापुर की शांति बाई' का निर्देशन किया। भास के तीन नाटकों- 'उरुभंगम, कर्णभार और दूतवाक्यम' को एक कथा में पिरोकर 'दुर्योधन' नाम से प्रस्तुत किया। इसमें कोरस के रूप में पूनाराम निषाद की भूमिका बहुत सरहनीय रही। 1980-81 में 'देवी का वरदान' और 'सोन सागर' तथा 'मंगलू दीदी' की प्रस्तुति की गई। वर्ष 1985 में हबीब तनवीर 'हिरमा की अमर कहानी' का लेखन और निर्देशन करते हैं। इस नाटक की प्रस्तुति में बस्तर के आदिवासियों को गौर माडिया नृत्य के लिए सम्मिलित किया गया।

बीच-बीच में हबीब तनवीर द्वारा कुछ संस्थाओं के लिए भी नाट्य प्रस्तुतियां की गई हैं। जैसे1988 में भिलाई की इप्टा शाखा के लिए शंकर शेष के नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' का निर्देशन किया तथा जन नाट्य मंच के लिए प्रेमचंद की कहानी 'मोटेराम का सत्याग्रह' का निर्देशन किया। फिर 1989 में एनएसडी के लिए गोर्की के नाटक 'एनिमिज़' का सफ़दर हाशमी द्वारा किए गए रूपान्तर 'दुश्मन' का निर्देशन तथा 1990 में श्री राम सेंटर रिपर्टरी के लिए असगर वजाहत के 'जिन लाहौर नई देख्या वो जन्म्याई नई' का मंचन किया, जो काफी सफल रहा। फिर 1990 में हबीब तनवीर 'देख रहे हैं नैन' का लेखन-निर्देशन करते हैं। 1993 में शेक्सपीयर के नाटक 'मिड समर नाइट्स ड्रीम' को छत्तीसगढ़ी में रूपान्तर कर 'कामदेव का अपना बसंत ऋतु

का सपना' नाम से प्रस्तुत किया। इस नाटक में भी उन्होंने लोक और शहरी कलाकारों का सफलतापूर्वक समन्वय किया।

सन 1998 में हबीब तनवीर फिर से 'जन नाट्य मंच' के तत्वावधान में 'एक औरत हिपेशिया भी थी' का लेखन और निर्देशन करते हैं। 2001 में संस्कृत नाटककार भट्ट नारायण के नाटक 'वेणी संहार' को हिंदी/ छत्तीसगढ़ी में रूपान्तरित एवं निर्देशित करते हैं। 2002 में भोपाल गैस त्रासदी पर आधारित नाटक 'ज़हरीली हवा' का मंचन किया। मई, 2005 में मोनिका मिश्रा की मृत्यु के बाद हबीब तनवीर अकेले हो गए। इस वियोग ने उन्हें अंदर तक तोड़ दिया था और वे कोई नई प्रस्तुति नहीं कर पाये। जीवन के अंतिम दिनों में उनका आखिर प्रयोग 2006 में टेगौर के नाटक 'विसर्जन' का निर्देशन था, जिसे बाद में उन्होंने 'राजरक्त' के रूप में प्रस्तुत किया। अपने जीवन में संघर्षों का सामना करने वाले हबीब तनवीर जीवन के आखिरी दिनों में लम्बी बीमारी के चलते 8 जून, 2009 को इस दुनिया में अपना अभिनय पूरा कर हमेशा के लिए नेपथ्य में चले गए।

**सम्मान**

आधुनिक भारतीय रंग-शैली की खोज-भरी इस लंबी, सार्थक और समर्पित रंग-यात्रा के महत्त्वपूर्ण योगदान की व्यापक प्रतिष्ठा के लिए उन्हें समय-समय पर विविध राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कारों एवं सम्मानों से अलंकृत किया गया है, जिनमें प्रमुख हैं-

1. निर्देशन के लिए संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार (1969)
2. राज्यसभा की सदस्यता (1972-78)
3. मध्यप्रदेश का राजकीय सम्मान (1973)
4. जवाहर लाल नेहरू फेलोशिप (1979)
5. चरनदास चोर के लिए फ्रिंज का प्रथम पुरस्कार(1982)

6. साहित्य कला परिषद, दिल्ली से पुरस्कृत, भारत सरकार द्वारा पद्मश्री। इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय द्वारा डी.लिट. की मानद उपाधि (1983)
7. शिखर सम्मान, रविशंकर विश्वविद्यालय में पंडित सुन्दरलाल शर्मा चेयर पर प्रतिष्ठित (1984)
8. मध्यप्रदेश के संस्कृति विभाग के सर्वोच्च राष्ट्रीय अलंकरण कालिदास सम्मान (1990)
9. भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण से अलंकृत (1992)
10. संगीत नाटक अकादमी की रत्न सदस्यता (फेलोशिप) से अलंकृत (1994)
11. भारत सरकार द्वारा 'नेशनल प्रोफ़ेसर' के पद से सम्मानित (2006)

## 1.2 कृतित्व

हिंदी रंगमंच पर हबीब तनवीर मुख्य रूप से एक नाटककार, निर्देशक के रूप में हमारे सामने आते हैं। कृतित्व पक्ष में उनके अब तक प्रकाशित सभी नाटकों को शामिल किया गया है, जिसका संक्षेप में विवरण निम्न है-

**कारतूस**

1954 में हबीब तनवीर द्वारा रचित 'कारतूस' वजीर अली की हिम्मत, वीरता और बुद्धिमत्ता को रेखांकित करने वाला बाल नाटक है। अपने आकार में यह नाटक काफी छोटा है, जिसमें केवल चार ही पात्र हैं। नाटक का समय 1799 की एक रात है और यह रात गोरखपुर के जंगल में अंग्रेज कर्नल कॉलिंस के खेमे के अंदरूनी हिस्से पर घटित है।

**चांदी का चम्मच**

इस बाल नाटक में साफ-सफाई, स्वच्छता, और रहन-सहन के तौर-तरीकों की तरफ ध्यान दिया गया है। नाटक में तीन मंजील की एक इमारत है। इस इमारत के नीचे एक दुकान है।

दुकानदार इस बात के लिए बहुत दुखी और गुस्से में रहता है कि ऊपर रहने वाली एक औरत नीचे कूड़ा फेक देती है जो उसकी दुकान में आकर गिरता है। इस औरत की यह आदत कैसे रोकी जाए, बस इसी में नाटक की कहानी बढ़ती है।

**आग की गेंद**

यह नाटक खेल और व्यवहारिक प्रयोग के ढंग से सूरज के बारे में बच्चों को जानकारी देने वाला एक छोटा-सा नाटक है। इसमें नाटककार ने 'अलिफ, बे और जीम' को चरित्र बनाकर पेश किया है। नाटक में जीम दादी, सूत्रधार या अध्यापक जैसा वरिष्ठ चरित्र है, जो 'अलिफ़ और बे' जैसे जिज्ञासु बच्चों को सितारे और उपग्रह का फर्क बताते हुए एक गेंद के जरिए आग के गोले यानी सूरज की कहानी सुनाता है।

**परम्परा**

यह नाटक भारतीय इतिहास पर आधारित अन्य बाल नाटकों की अपेक्षा में थोड़ा बड़ा नाटक है। इसमें सूत्रधार, नटी और प्राम्टर आदि को मिलकर कुल 20 पात्र हैं। इसमें रंग-संकेतों का काफी प्रयोग किया है। इसमें नाटककार ने आर्यों के आगमन अर्थात वैदिक काल से लेकर महात्मा गाँधी और देश के विभाजन तक का सम्पूर्ण भारतीय इतिहास बहुत संक्षेप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

**दूध का गिलास**

यह नाटक बच्चों को दूध पीने के लिए प्रेरित करता है। इस नाटक में मुख्य रूप से पांच चरित्र (दूध के विभिन्न संघटक) हैं। जैसे शीरीं (शक्कर), बी. प्रोटीन (प्रोटीन), मिक्खू बेगम (चर्बी) और जल्लो आपा (पानी) के रूप में। यह एक स्वप्न नाटक है। इसमें एक बच्चा (बिट्टू), जिसे दूध पीना पसंद नहीं है, सपने में इन चरित्रों से बात करती है और अंत में स्वप्न के चरित्र को याद करके दूध का गिलास उठा कर पी जाती है।

**आगरा बाज़ार**

'आगरा बाज़ार' नाटक सबसे पहले 1954 में खेला गया था और तब से लेकर अब तक इस नाटक के कई सौ प्रदर्शन हो चुके हैं। इस नाटक को हबीब तनवीर ने नज़ीर अकबराबादी के समय की आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों के साथ बुना। देखा जाए तो नाटक की कथा एक ककड़ी वाला के इर्द-गिर्द घूमते हुए अपने लक्ष्य तक पहुंचती है। शुरुआत में यह केवल एक घंटे का नाटक था। बाद की प्रस्तुतियों में इसके कथानक में विस्तार किया गया।

**गाँव का नाम ससुराल, मोर नाम दामाद**

इस नाटक का निर्माण रायपुर में आयोजित 'नाचा' की एक कार्यशाला के दौरान किया गया था। इसमें छत्तीसगढ़ के तीन गम्मत 'छेर-छेरा', 'बुढ़वा विवाह' और 'देवार-देवारिन' के चुनिंदा प्रसंगों को एक नाटक में पिरोया गया है। इसमें मुख्य पात्र झंगलू, मंगलू, शांति, मानती हैं। नाटक में झंगलू और मानती की प्रेम कथा के माध्यम से कई सामाजिक कुरीतियों को उठाया गया है। नाटक में बीच-बीच छत्तीसगढ़ी लोक गीतों का भी प्रयोग किया गया है। अंत में यह नाटक प्रेम की जीत के गीतों पर समाप्त होता है।

**चरनदास चोर**

इस नाटक को हबीब तनवीर ने सबसे पहले 1974 में खेला था। यह उनकी विश्व ख्याति का आधार है, जिसकी अब तक कई हजार प्रस्तुतियां हो चुकी हैं। इस नाटक की कहानी एक चोर के आस-पास घूमती है जिसमें एक दिन पुलिस से बचते हुए चरनदास चोर एक गुरु के पास पहुँच जाता है। गुरु उसे चोरी छोड़ देने का प्रण करने को कहता है। तब चरनदास उससे चार चीज (सोने की थाली में खाना नहीं खाएगा, हाथी पर बैठकर किसी जुलुस में नहीं जाएगा, किसी रानी से शादी नहीं करेगा और किसी देश का राजा नहीं बनेगा) छोड़ने का प्रण करता है। गुरु कहता है कि

अगर तुम चोरी करना नहीं छोड़ता तो झूठ बोलना छोड़ दे। आखिर चरनदास उसकी यह बात मान लेता है। इस नाटक में एक-एक कर चारों प्रण उसके सामने आते जाते हैं। वह किस तरह इन समस्याओं का सामना करता है, यही इस नाटक में दिखाया गया है।

**पोंगा पंडित**

छत्तीसगढ़ में 'नाचा' के एक लोकप्रिय प्रहसन पर आधारित 'पोंगा पंडित' ('जमादारिन' नाम से भी खेला) को हबीब साहब ने कई बार खेला है। यह नाटक मुख्य रूप से हिंदू धर्म में व्याप्त कुरीतियों और पोंगा पंथी पर प्रहार करते हुए पुरोहितवाद की खुली आलोचना करता है। इसमें जमादारिन को मुख्य रूप से केन्द्रित करते हुए पंडित के लालची चरित्र को भी दिखाया गया।

**बहादुर कलारिन**

बहादुर कलारिन का मिथक छत्तीसगढ़ के दुर्ग जिले के तहसील बालोद के सोरर और चिरचारी गाँव से सम्बद्ध है। इस मिथक के अनुसार बहादुर एक खूबसूरत महिला थी, जो शराब बेचने का काम करती थी। उसका बेटा छछन छाड़ू ने एक सौ छब्बीस शादियाँ की। लेकिन अंततः उसने अपनी माँ को ही वासना की नजर से देखा। माँ यह जानकर हैरान थी और उसे मारने का फैसला लेती है। वह उसे तेज मिर्च वाला खाना खिलाती है और कुएं से पानी लाने को कहती है। तब मौका पाते ही उसे कुएं में धकेल देती है और आप भी आत्महत्या कर लेती है।

**हिरमा की अमर कहानी**

आदिवासी परम्परा और संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता यह नाटक तितुर बसना के आदिवासी राजा के माध्यम से आजादी के बाद राजघरानों को मिलाने और इससे जुड़ी समस्याओं को केन्द्रित करता है। नाटक की शुरुआत में (सूत्रधार) कहता हैं, *"ये कहानी आदिवासी रियासत तितुरबसना की है। वहां के महाराज हिरमादेव सिंह गंगबंसी हैं।... मैंने*

*आदिवासी राज में सामंतवाद देखा है। सामंतवाद को ख़त्म करके लोकतंत्र को कैसे स्थापित किया जाये। मैं इस संघर्ष में लग गया। संघर्ष के रास्ते में बहुत ऊँच-नीच देखी और यही हमारे नाटक का विषय है।''*[13] नाटक में राजनीति के दांवपेंच पर भी जमकर प्रहार है तथा नाटककार आदिवासी क्षेत्रों में विकास की नीतियों में परिवर्तन का भी पक्षधर है।

**कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना**

शेक्सपीयर के अंग्रेजी नाटक 'मिड समर नाइट्स ड्रीम' का हबीब तनवीर द्वारा भारतीय शैली में किया गया यह नाट्य रूपांतरण है। इसमें ड्यूक थिसियस की हिपोलाइटा से होने वाली शादी के अवसर पर कुछ मजदूर और कारीगर एक नाटक करने की ठान लेते हैं। नाटक की रिहर्सल करने के लिए जब वे सब एक जंगल में पहुँचते हैं तब यहां से नाटक में दूसरी कहानी शुरू होती है। यह कहानी बड़ी रोचक तरीके से प्रस्तुत की गई है। हबीब तनवीर की यही खासियत थी कि वह नाटक को इतना प्रायोगिक बना देते थे कि दर्शक उसे देखने की जगह जीने लगता था।

**सड़क**

यह लघु नाटक आदिवासी क्षेत्रों में विकास-समस्या पर केन्द्रित था। इस नाटक की शुरुआत में एक जज के यहां एक मुकदमा आता है जिसमें उद्योगपतियों, व्यापारियों और नेताओं ने ग्रामीणों पर मुकदमा किया है कि उन्होंने वह सड़क तोड़ दी जो उनके विकास के लिए बनाई गई थी। सड़क खोदने के मुक़दमे के चलने के दौरान ही दोनों पक्षों के तर्कों से उस क्षेत्र के विकास से जुड़े पहलू सामने आते-जाते हैं। इनके इन्हीं सब तर्कों के जाल में आगे बढ़ता यह नाटक अपनी बात कहने में सफल रहा है।

---

[13] अग्रवाल, महावीर; हबीब तनवीर का रंग संसार; श्रीप्रकाशन, ए 14 आदर्श नगर, दुर्ग, छत्तीसगढ़; संस्करण 2006; पृष्ट- 150.

**ए ब्रोकेन ब्रिज**

इस नाटक को हबीब तनवीर द्वारा 'शिकागो एक्टर्स एन्सेंब्ल' के लिए अंग्रेजी में लिखा गया था। हबीब ने इसे अपने शिकागो प्रवास के दौरान ही लिखा। यह नाटक अमेरिका में रह रहे उन अप्रवासियों के बारे में था जिनका जीवित संपर्क अब अपने देश से नहीं था, लेकिन जिनकी स्मृतियों में अपना देश अब भी था। इस नाटक को भी हबीब ने अपनी हस्ताक्षर शैली में गीत और संगीत से मिला कर नियोजित किया था।

**डैडी का घर**

यह नाटक हबीब तनवीर ने अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति के लिए 1995 में लिखा था। उस समय हबीब तनवीर दिल्ली के बेर सराय के मकान में अपने साथियों के साथ रह रहे थे कि तभी डीडीए ने उसे खाली करने का नोटिस दे दिया। हबीब ने अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण साल इसी मकान में गुजारे थे और अब उनसे जबरन यह घर खाली करवाया जा रहा था। इस कारण वे दिल्ली छोड़कर भोपाल चले गए। इस स्थिति की अभिव्यक्ति के लिए ही उन्होंने यह लघु नाटक तैयार किया।

**एक औरत हिपेशिया भी थी**

हबीब तनवीर ने यह नाटक 'जन नाट्य मंच' के लिए नब्बे के दशक में लिखा और निर्देशित किया था। यह समाज में बढ़ते कट्टरवाद के खिलाफ उनका एक वक्तव्य था। नाटक में हबीब ने ऐतिहासिक पात्र हिपेशिया के माध्यम से कट्टरता के परिणाम को दिखाया है जिसमें हिपेशिया को ईसाईयों के हमले का शिकार होना पड़ा था। इस नाटक की एक खास बात यह कि इसमें हबीब ने अपनी शैली के विपरीत क्लिष्ट उर्दू का प्रयोग किया।

**ज़हरीली हवा**

भोपाल गैस त्रासदी पर आधारित राहुल वर्मा के अंग्रेजी नाटक 'भोपाल' का हिंदी में 'ज़हरीली हवा' नाम से रूपांतर एवं निर्देशन हबीब तनवीर ने किया था। इस त्रासदी में कई हजार लोगों की मौत हुई थी और असंख्य लोग आज भी इस त्रासदी से आहत हैं। इस नाटक में डॉ. सोनिया, जो एक विदेशी फैक्टरी की लापरवाही के बुरे नतीजे मालूम करने में लगी है कि रिसर्च को कैसे दबाने की कोशिश की जाती है, यह सब दिखाया गया है।

**अन्य रचनाएँ**

हबीब तनवीर ने नाटकों के अलावा शेर, गीत, कविताएं, नज़्में, गजलें भी लिखी हैं। उनको जितना प्रेम अभिनय से था उतना ही गीत, शायरी से भी रहा। इसी के चलते वे अपने कॉलेज के दिनों से ही वह मुशायरों में जाने लगे थे। फिर मुंबई आने पर एक शायर की हैसियत से 'प्रगतिशील लेखक संघ' से जुड़े। उन दिनों वे सज्जाद जहीर के घर नियमित रूप से प्रगतिशील लेखकों की बैठकों में शामिल होते और अपनी नई-नई नज्मों, गजलों को पढ़ते। अली सरदार जाफरी की 'नया अदब' नाम की एक साहित्यिक पत्रिका में हबीब की छह गजलों का पहला सैट भी प्रकाशित हुआ था, जिसकी अच्छी-खासी चर्चा भी हुई। उन दिनों बम्बई के अलावा गुजरात, उतर-प्रदेश और मध्य-प्रदेश के अखिल भारतीय मुशायरों में भी शिरकत करने के लिए उन्हें आमंत्रित किया जाने लगा था।

दुःख की बात यह है कि इतना कुछ लिखने के बाद भी हबीब तनवीर ने इन्हें प्रकाशित करवाने का कभी नहीं सोचा, जैसे अपने नाटकों के लिए नहीं सोचा था। इसलिए आज उनकी शेरो-शायरी, नज़्मों', कविताओं का हिंदी में कोई स्वतंत्र संग्रह नहीं है। व्यक्तिगत प्रयासों से ही उनकी कुछ रचनाएँ जरुर प्रकाशित हुई हैं, जिसके आधार पर हम उनके काव्य पक्ष को समझ

सकते हैं। उनकी कुछ महत्त्वपूर्ण और उपलब्ध रचनाएँ यहाँ प्रस्तुत हैं-

**शेर :** हबीब तनवीर द्वारा लिखित विभिन्न शेरों में उनके उपलब्ध शेर इस प्रकार हैं-

1. *ख़ार को तो ज़बान-ए-गुल बख्शी*
   *गुल को लेकिन ज़बान-ए-ख़ारही दी।*[14]
2. *मैं नहीं जा पाऊंगा यारो सू-ए-गुलज़ार अभी*
   *देखनी है आब-जू-ए-ज़ीस्त की रफ़्तार अभी।*[15]

**नज़्म :** हबीब तनवीर ने कई नज़्में लिखी है जिसमें 'वापसी', 'नीला आसमान', 'तुम्हारे गाँव से जो रास्ता निकलता है' आदि उनकी उपलब्ध नज़्में हैं। **'तुम्हारे गाँव से जो रास्ता निकलता है'** में हबीब के आशिक मन का परिचय मिलता है। इसमें प्रेमिका के गाँव की हर चीज़ को वह अनुभव करता नज़र आता है। यह कुछ नज़्म इस प्रकार है-

*"तुम्हारे गाँव से जो रास्ता निकलता है*
*मैं बार बार उसी रास्ते गुजरता हूं*
*हर एक ज़र्रा यहाँ का मिरी निगाह में है।*
*तुम्हारे गाँव के उस रास्ते एक इक मोड़*
*खुदा हुआ है मिरे पाँव की लकीरों में*
*हर एक मोड़ पे रुकता हुआ मैं गुज़रा हूँ*
*कभी सुनंद की दुक्काँ पे जा के खाया पान*
*कभी भरे हुए बाज़ार पर नज़र दौड़ाई*
*कभी शरीफ के होटल पे रुक के पी चाय*

[14] https://www.rekhta.org
[15] https://www.rekhta.org

*मुझे शरीफ से मतलब न कुछ सुनंद से काम*

*न उस भरे हुए बाज़ार से मुझे कोई रब्त*

*वो पूछें हाल मैं उन से कहूँ कि अच्छा हूं*

*वो मुझ से बढ़ती हुई कीमतों का ज़िक्र करें*

*मैं उन से शहर की बे-लुत्फियों की बात करूँ*

*गुज़रता है बस इस तरफ एक दो लम्हे*

*और इसके बाद सड़क पर कदम बढ़ाता है*

*तुम्हारे गाँव से जो रास्ता निकलता है...*

*ये देखो बढ़ने ही वाली है जैसे गाँव की शाम*

*ये जैसे उठने ही वाला है गाँव का बाज़ार*

*यहां से वैसे ही बस मैं भी उठने वाला हूँ*

*बिसान-ए-शाम बस अब मैं भी बढ़ ही जाऊंगा*

*न कोई मुझसे ये पूछेगा क्यूँ मैं आया था*

*न मैं किसी से कहा, मैं जाता हूँ*

*और एक उम्र से इस तरह जाने कितनी बार*

*तुम्हारे गाँव के रास्ते से गुज़रा हूँ,*

*और अब न जाने इसी तरफ और कितनी बार*

*तुम्हारे गाँव उस इस रास्ते से गुज़रुंगा"*[16]

**वापसी :** इस नज़्म में नायक (प्रेमी/ पति) के घर लौटने को केन्द्रित किया है। वह घर जाने को बेहद बेताब है। जब वह घर लौटता है तो नायिका (प्रेमिका/ पत्नी) को दहलीज़ पर ऐसे खड़ा पता है जैसे उसने उसे पहचाना नहीं। उसमें पहले जैसा वह उत्साह, उमंग नहीं दिखता। समय के बड़े

[16] तनवीर, हबीब; 'तुम्हारे गाँव से जो रास्ता निकलता है'; www.rekhta.org

अन्तराल के बाद आज दोनों एक दूसरे को पहचानने की कोशिश कर रहे। इन्हीं सब को बड़ी खूबसूरती से पेश किया गया है।

*"मैं ने सोचा तुम्हें मुद्दत से नहीं देखा है*

*दिल बहुत दिन से है बेचैन चलूँ घर हो आऊँ*

*दूर से घर नज़र आया रौशन*

*सारी बस्ती में मिला एक मिरा घर बे-ख़्वाब*

*पास पहुंचा तो वो देखा जो निगाहों में मिरी घूम रहा है अब तक*

*रौशन कमरे के अंदर!*

*और दहलीज़ पे तुम!*

*सुन के शायद मिरी चाप*

*तुम निकल आई थीं बिजली की तरफ*

*और वहीं रुक सी गई थी !*

*देर तक !*

*पाँव दहलीज़ पे चौखट पे रखे दोनों हाथ*

*बाल बिखराए हुए शानों पर*

*रौशनी पुश्त पे हाले की तरफ*

*साँस की आमद-ओ-शुद थी न कोई जुम्बिश-ए-जिस्म*

*ऐसे तस्वीर लगी है*

*जैसे आसन पे खड़ी हो देवी*

*मैं ने सोचा अभी तुम ने मुझे पहचाना नहीं*

*बस इसी सोच में ले कर तुम्हें अंदर आया*

*पास बिठला के किया यूँही किसी बात का ज़िक्र*

*तुम ने बातें तो बहुत कीं मगर उन बातों में*

*कोई वाबस्तगी-ए-दिल*

*कोई मानूस इशारा*

*लब पे इज़हार-ए-ख़ुशी*

*न कोई गम की लकीर*

*अरे कुछ भी तो न था*

*न वो हँसना, न वो रोना , न शिकायत, न गिला*

*न वो रग़बत की कोई चीज़ पकाने का ख्याल*

*न दरी ला के बिछाना न वो आंगन की लिपाई की कोई बात*

*न निगाहों में ये अहसास कि हम तुम दोनों*

*हैं कोई बीस बरस के इक साथ*

*लाख कोशिश पे भी तुमने मुझे पहचाना नहीं*

*मैंने जाना तुम्हें मैंने भी नहीं पहचाना*

*एक इशारे में ज़माना ही बदल जाता है*

*सिलसिला उन्स-ओ रिफ़ाकतका कोई आज भी है*

*पर ये बांधा है नया रिश्ता-ए-ज़ीस्त*

*मैं भी हूँ और कोई, जिसके साथ*

*तुम भी हँस-बोल के रह लेती हो*

*वो भी थी और कोई*

*जो वहीं रुक गई उस चौखट पर*

*जैसे तस्वीर लगी हो*

*जैसे आसान पे खड़ी हो देवी''*[17]

**नीला आसमान :** हबीब तनवीर ने जिस तरह अपने नाटकों में बच्चों को स्थान दिया है, वैसे ही उनका कवि मन भी इससे अछूता नहीं। बच्चों का स्वभाव होता है कि वे जिज्ञासावश कुछ न कुछ सवाल पूछते हैं। उनकी 'नीला आसमान' भी कुछ इसी तरह की नज़्म है। इसमें बच्ची अपने बाबा से सवाल पूछती है कि 'आसमान नीला क्यों है' ? इस बात के उत्तर में पिता के मन की बात सामने आती है। नज़्म इस प्रकार है-

*''मेरी बच्ची ने मुझसे कल पूछा*
*बाबा ये आसमां है नीला क्यूँ*
*मैं ने सोचा पर उस से कह न सका*
*ये सवाल उस के दिल में आया क्यूँ*
*क्यूँ ये बातें हैं इतनी दिल-आवेज़*
*है ये अंदाज़ इतना प्यारा क्यूँ*
*क्यूँ हैं लब पर ये इतने सारे सवाल*
*है तबस्सुम ये फूल जैसा क्यूँ*
*मेरे दिल में उधेड़-बुन क्या है*
*मैं सितारें से जा के उलझा क्यूँ*
*सितम-अंग्रेज जिंदगी दिल-कश*
*फिर ये आजम-ए-कार मरना क्यूँ*
*मैं ने ये क्या जवाब सोचा है*
*तुम ने ऐसा सवाल पूछा क्यूँ''*[18]

---

17 तनवीर, हबीब; 'वापसी'; www.rekhta.org

18 तनवीर, हबीब; 'नीला असमान'; www.rekhta.org

**गज़ल :** हबीब तनवीर गज़ल विधा में भी पारंगत थे। वे बड़े रोचक ढंग से अपना विषय इन गज़लों में प्रस्तुत करते। देखा जाए तो उनकी इन रचनाओं में उर्दू के शब्दों का प्रयोग अधिक मात्र में है। उदाहरण के लिए उनकी एक गज़ल कुछ इस प्रकार है-

1. *तज़करा जफ़ाओं का*

*अश्क खू की सूरत में*

*गम की तरजुमानी है*

*मुझको गम से क्या लेना*

*पर मेरी वफ़ाओं की*

*इक यही निशानी है।*

*शाद काम-ओ-आसूदा*

*कब मेरी मुहब्बत है*

*काश तू समझ सकती*

*अपने साथियों का गम*

*अपनी ज़िन्दगी का गम*

*क्या ये जिंदगानी है।*

*रंगोबू के अफसाने*

*हो न जाएँ पज़मुर्दा*

*निकहतें न मर जाएं*

*हर्फ़ हर्फ़ में पिनहां*

*है खिजां की वीरानी*

*ज़ुल्म की कहानी है।*

*दादे सब्र देते हैं*

*दर्द और बढ़ता है*

*खाक उस तसल्ली पर*

*इन्तहाए दिल मालूम*

*दिल के दुश्मनों को भी*

*ज़ोम-ए-पासबानी है।*

*ये तिक्समे ज़रदारी*

*एक ही इशारे में*

*हो गया तहोबाला*

*साक़िया न जाने क्या*

*तेरे इंकलाबी ने*

*अपने जी में ठानी है।*

*क्यूं नहीं समझ पता*

*क्यूं निगाह जाती है*

*मंज़िलों से भी आगे*

*राहबर है दीवाना*

*काफ़िले की नज़रों ने*

*किसकी बात मानी है।*

*हुस्ने रुए गेती पर*

*है दवाम का परतौ*

*अक्से रायते अहमर*

*अब यहां का हर लमहा*

*ज़िन्दा और पायान्दा*

*और गैरफानी है।*

*आज तेरे आँचल की*

*नर्म सरसराहट में*

*बिजलियों के तेवर हैं*

*और ये बर्क अब मुझको*

*ऊँचे-ऊँचे महलों पर*

*आज ही गिरानी है।*

*वह भी महबे हैरत हैं*

*अब मेरी वफ़ाओं पर*

*बदगुमां है महफ़िल भी*

*उनके सामने 'तनवीर'*

*आज तेरी बातों में*

*किस कदर रवानी है*।[19]

**गीत :** कम ही लोग जानते हैं कि हबीब तनवीर एक गीतकार भी थे। उन्होंने अपने बम्बई प्रवास के दौरान फिल्मों के लिए गीत लिखें थे। आगे चलकर तो उन्होंने अपने नाटकों के स्वयं लिए गीत रचे। हम 'चरनदास चोर', 'मिट्टी की गाड़ी', 'हिरमा की अमर कहानी', 'देख रहे हैं नैन', 'जिस लाहौर नहीं देख्या...', 'कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना' आदि नाटकों में उनके रचित गीतों का आनंद ले सकते हैं। उनके सभी गीत नाट्य-परिस्थिति के अनुकूल हैं। जैसे 'हिरमा की अमर कहानी' में आदिवासियों के अपने जल, जंगल, जमीन से जुड़े होने के भाव को प्रस्तुत करता हुआ यह गीत-

---

[19] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1993; पृ. 150

*"यही हमारी महतारी, ये धरती इतनी प्यारी*

*पर्वत बन अभिमान दिखाती, बन के नदी इतराती।*

*सूरज को भी यहीं बुलाती, चाँद का दर्पण लाती।*

*तारों की महफिल गरमाती हवा का गीत सुनाती।*

*यही हमारी महतारी...*

*हम धरती के लाल हैं, धरती के सैनिक भी हम हैं।*

*हम जंगल के वासी, जंगल के रक्षक भी हम हैं*

*सेवक भी पेड़ों के हम हैं, और मालिक भी हम हैं*

*यही हमारी महतारी..."* [20]

इसी तरह नाटक 'देख रहे हैं नैन' का यह गीत भी द्रष्टव्य है, जिसमें नाटक का नायक जब विराट साधू बन जाता है, तब गाया जाता है। जैसे-

*"अब रहिये बैठ एक जंगल में, सब कुछ तजकर बैराग लिये।*

*वो करम की गठरी सर पर है, और बोझ भी उसका भारी है।*

*कुछ बोझ से पांव रुका भी है, कुछ चलने की तैयारी है।*

*कल और किसी की बारी थी, अब आज हमारी बारी है।*

*एक नींद का झोंका आता है, यानी बहतेरे जाग लिये*

*अब रहिये बैठ एक जंगल में...।*

*ये धन दौलत भी बंधन है, घर बार गृहस्थी बंधन है।*

*बीबी बच्चे बटमार भी है, बढ़ती सम्पति बंधन है।*

*खुद तेरा दिल गद्दार भी है, खुद तेरी हस्ती बंधन है।*

*बो जितने दोस्त हमारे थे, सब एक एक कर भाग लिये*

---

[20] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1993; पृ. 151

*अब रहिये बैठ...*

*औरों को सुख पहुँचाने में भी, जुल्म का पहलू शामिल है।*

*दुनिया के नाम कमाने में भी, जुल्म का पहलू शामिल है।*

*खुद दानिस्ता मर जाने में भी, जुल्म का पहलू शामिल है।*

*आखिर कब तक ये हाय हाय, एक अभिलाषा की आग लिये*

*अब रहिये बैठ एक जंगल में ...*[21]

**कविताएं :** हबीब तनवीर का जो तेवर, भाव-बोध उनके नाटकों में दिखाई देता है वही उनकी कविताओं में भी दिखता है। अपने लेखन में वे कभी भी समाज से कटते नहीं। यहां भी वे आम आदमी की वकालत करते हुए प्रश्न करते दिखाई देते हैं। विषय विविधता भी उनकी कविताओ में देखी जा सकती है। 'जंगल', 'रामनाथ का जीवन चरित्र', 'रतौंदी', 'सफेद स्वर', 'दरीचे', 'इलेक्ट्रांस की आवाज़' आदि उनकी कुछ इसी तरह की कविताएँ हैं।

**1. जंगल**

*वह क्या था*

*दोस्त वह क्या था*

*जिसने जंगल से बस्ती का रास्ता दिखाया*

*इंसान की तंजीम*

*वह क्या था*

*दोस्त वह क्या था*

*जिसने बस्ती के अन्दर जंगल खड़े कर दिए*

---

[21] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1993; पृ. 152

*इंसान की तंजीम*

*वह क्या था*

*दोस्त वह क्या था*

*जो बस्ती के जंगल साफ कर देता है*

*वह दिन कब आएगा*

*दोस्त वह दिन कब आएगा*

*जब बस्ती-बस्ती भी होगी*

*और बस्ती की रविश–रविश पर*

*जंगल की हवाएं भी होंगी।*[22]

**2. रामनाथ का जीवन चरित्र**

*रामनाथ ने जीवन पाया साठ या इकसठ साल*

*रामनाथ ने जीवन में कपड़े पहने कुल छः सौ गज़*

*पगड़ी पांच*

*जूते पंद्रह*

*रामनाथ ने अपने जीवन में सौ मन चावल खाया*

*सब्जी दस मन*

*फ़ंके किए अनगिनत*

*शराब दो सौ बोतल*

*पूजा की दो हजार बार*

*रामनाथ ने अपने जीवन में धरती नापी कुल जमा पैंसठ हजार मील*

---

[22] तनवीर, हबीब; 'जंगल' (कविता); प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 275

*सोया पंद्रह साल*

*प्यार की रातें उसे मिलीं दो ढाई हजार*

*उसके जीवन में आई बीबी के सिवा कुल पांच औरतें*

*एक के साथ पचास की उम्र में प्यार किया और प्यार किया नौ साल*

*सत्तर फीट कटवाए बाल*

*सत्रह फीट नाख़ून*

*रुपया कमाया दस हजार या ग्यारह*

*कुछ रुपया मित्रों को दिया कुछ मंदिर को*

*और छोड़ा आठ रूपये उन्नीस नया पैसे का क़र्ज़*

*बस यह गिनती रामनाथ का जीवन है*

*इसमें शामिल नहीं चिता की लकड़ी, तेल, कफ़न*

*तेरही का भोजन*

*रामनाथ बहुत हँसमुख था, उसने पाया इक सन्तुष्ट सुखी जीवन*

*चोरी कभी न की*

*कभी कभार अलबत्ता कह देता बीबी से झूठ*

*गाली दी, दो तीन महीने में एक-आध*

*एक च्यूंटी भी नहीं मारी*

*बच्चे छोड़े सात।*

*भूल चुके हैं गाँव के सबलोग अब उसकी हर बात*

*रामनाथ!*[23]

**3. रतौंदी**

*वह कीड़ा*

*जो जमीन से तीन इंच ऊपर उड़ता है*

*दो घंटे जीता है*

*दस फीट जमीन को कायनात समझता है*

*और देखता उतने ही टुकड़े को है*

*जिस पर उसका साया पड़े*

*मुझ पर उड़ता रहे*

*मुझे देखने की कोशिश करता रहा*

*काटता रहा*

*और यूं उसने जिन्दगी बसर कर दी*[24]

**4. सफेद सवार**

(नेहरु की मौत पर)

*एक सवार*

*रात का एक जंगल*

*रात के एक जंगल में एक सफेद सवार*

*जामिद पेड़*

*साकित जंगल*

---

[23] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कलकत्ता; संस्करण-1993; पृ. 147-148

[24] तनवीर, हबीब; 'रतौंदी' (कविता); प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 276

*जंगल भी लक-दक*

*अथाह एक जंगल के आगे तन्हा एक सवार*

*एक सवार, एक तेज हवा का झोंका*

*एक सफेद सवार*

*जुंबिश में सब पेड़ हैं पत्ते हिलते हैं*

*वसी एक जंगल का जंगल जंगल जलता है*

*कब आया और कहां गया वह तन्हा एक सवार*

*एक सफेद सवार*[25]

**5. गरदिल मंजिल**

(नेहरु की वसीयत)

*मेरी खाक*

*इन फिजाओं में उड़ा दो*

*इन्हीं आवारा हवाओं में तो पनपी थी यह खाक*

*मुश्तेखाक*

*दिल को कर दो इन्हीं आवारा हवाओं के सुपुर्द*

*धूल बन कर रूखे देहका निकल जाने दो*

*अर्केमेहनते देहका से यह खाक*

*बन ही जाएगी कभी लालवो गुल गंदुम व जौ*

*ले के गंगा में छिड़क दो*

*मौजे गंगा से उठती, दामने गंगा में पली*

---

[25] तनवीर, हबीब; 'रतौंदी' (कविता); प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 128

*बैठ जाएगी उसी पहलुए बेचैन में खाक*

*लरजिशे मौजे गमे दिल बनकर*

*मेरी खाक*

*कुछ तो गंगा में छिड़क दो*

*कुछ फिजाओं में बिखर जाने दो*

*गरदे मंजिल है यह खाक*

*उड़ते रहने दो इसे*

*इसमें बाकी है अभी काविशे यक मंजिले नौ*[26]

**6. दरीचे**

*ताक रही थी मुझ को एकदरीचे से*

*और कहती थी बीस रूपये*

*कितने दिन यूं ही गुज़रे*

*वो मुझको तकती ही रही*

*खिड़कियों से कहती ही रही*

*बीस रूपये*

*फिर मैंने कुछ दिनों वो कूचा छोड़ दिया*

*कितने दिन यूं ही गुज़रे*

*फिर एक दिन मैं चला आ रहा था कि यकायक क्या देखा*

*ताक रही थी मुझको उसी दरीचे से*

---

[26] तनवीर, हबीब; 'रतौंदी' (कविता); प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 280

*वही कमीस*

*नीले रंग में रंगी हुई और सुर्ख डोर से सिली हुई*

*वो ही कमीज़*

*कहती थी पच्चीस रूपये, पच्चीस रूपये, पच्चीस रूपये*[27]

## 7. इलेक्ट्रांस की आवाज़

*सुबह दम मुझसे मशीनों की धमक ने यह कहा*

*आबो दाने के तजस्सुस में ही गुज़री तेरी उम्र*

*गो मोहब्बत की परस्तिश को बना तेरा दिमाग*

*गमे दुनिया से सुबकदोश तुझे करना है*

*चाहे इसके लिए करनी पड़े आफ़ाक से जंग*

*इन्कलाब और एक आयेगा मशीनों का अभी*

*रोकने से भी न रुक पायेगा जब आयेगा*

*गैब से बारिशे ज़र होगी और इतनी होगी*

*खुद ब खुद देखते ही देखते बदलेगा निज़ाम*

*और निज़ाम आप न बदला तो उलट जायेगा*

*हुस्ने तख़लीक़े बशर और निखर आयेगा*

*हर जफ़ाकश को मिलेगा गमे हस्ती का सिला*[28]

---

[27] तनवीर, हबीब; 'रतौंदी' (कविता); प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 286

[28] तनवीर, हबीब; 'इलेक्ट्रांस की आवाज़' (कविता); प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 297

## प्रकाशित लेख और भाषण

हबीब तनवीर का नाटककार पक्ष मुख्य रूप में हमारे सामने आता है। लेकिन हबीब तनवीर ने समय-समय पर कुछ अन्य विधाओं में भी हाथ आजमाया है। साथ ही अलग-अलग समय, स्थान पर दिए गए भाषणों का लिप्यांतरण भी किया गया है। ये लेख, भाषण हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में मिलते हैं।

### लेख

1. 'उपभोक्ता समाज में कला और संस्कृति'
2. 'भारतीय थियेटर का क्षरण और पुनर्निर्माण साथ-साथ चल रहा है'
3. 'पारम्परिक थियेटर'
4. 'पहचान का संकट और थियेटर की प्रमाणिकता का सवाल'
5. पारसी थियेटर के नाटक
6. योरोप के यात्रा की कुछ घटनाएँ
7. Journe into Theatre.
8. The Indian Experiment.
9. My Subversive Allies in Theatre.
10. The Crisis of Identity and the question of Authenticity.

### भाषण

1. थियेटर और मेरे अनुभव
2. क्लासिकल और फोक थियेटर
3. रंगमंच व लोक संस्कृति

4. लोककथाओं और लोकगीतों में प्रतिवाद के स्वर
5. Cultural Pursuasions of Politics and their Implication.
6. Subversive Processes in third world culture : The Question Pursuasion of Politics and their Implication.
7. Shakespeare in Translation: The Indian Context.
8. Indian Theatre.

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि हबीब तनवीर का रंग व्यक्तित्व बहुआयामी है। वे पत्रकार, कवि, समीक्षक, अभिनेता, गीतकार, लेखक, निर्देशक सभी कुछ एक साथ थे। बम्बई का जीवन उनके व्यक्तित्व निर्माण की पहली कड़ी है जहाँ वे कलात्मक, सृजनात्मक संसार से जुड़ते हैं। साथ ही 'इप्टा' के साथ काम करते हुए लोक की गतिशील ऊर्जा ने उन्हें गहरे तक प्रभावित किया। इस प्रभाव ने ही आगे चलकर हबीब तनवीर को उनके मंचीय मुहावरे तक पहुँचाया। उनकी रंग प्रक्रिया का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी रहा कि उन्होंने विफलताओं, विरोधों और कटु-आलोचनाओं की चौतरफ़ा मार सहते हुए भी अपनी रचनात्मक ज़िद नहीं छोड़ी।